परमपूज्य परमहंस स्वर्गीय श्री सेवारामजी महाराज

डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा
पूर्व आचार्य
श्री दादू आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर

आपका जन्म संवत् १९२५ विक्रम में सूल्यास के पास लालास नामक ग्राममें हुआ था । जन्म के कुछ काल बाद ही आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। संरक्षक के अभाव से क्लांत हो माता ने संवत् १९३० में पाँच वर्ष की आयु में आपको जमात उदयपुर निवासी बाबाजी मनीरामजी के अखाड़े के सन्त स्वामी बुधराम जी को चढा दिया। तब से अब तक उनासी (7९) वर्ष आपकी आयु के साधु समाज में ही व्यतीत हुए ।

उस समय दादूपंथी सम्प्रदाय के नागा साधुओंकी सात जमातें जयपुर राज्य के आश्रित थीं। आप जमात उदयपुर में ही उपयुक्त स्वामीजी के पास दीक्षित हुए । उस समय की प्रणाली के अनुसार आपने ग्यारह बारह वर्ष की आयु में स्वामीजी महाराज श्री दादूजी की वाणी का अध्ययन स्वामी गीधारामजी के दादा गुरु चन्दगीदासजी से किया । दादूजी की वाणी व श्री सुंदरदासजी के सवैये पढ़ लेना ही उस समय पर्याप्त समझा जाता था। जमातों में प्रधान कार्य था शस्त्रविद्या के अभ्यास का। आपने खाँडा, पट्टा, सेला, बन्दूक आदि का भी अभ्यास किया तथा गोठड़े गाँव में कुछ समय तक खेती का कार्य भी किया। गोठड़े से फिर आप ओभटू ग्राम जो चिड़ावा के पास हैं, चले गए और वहीं मकान बना कर तथा खेती कर रहने लगे । समय समय पर आपने उस समयके योग्य तम महात्माओं के सान्निध्य में रह कर साधुता का महत्त्व समझा। आपकी मनोवृत्ति बाल्यकाल से ही वैराग्यमयी थी। किसी वस्तु की लालसा करना आपके स्वभाव के विरुद्ध था। कम बोलना, गंभीर मुद्रा में रहना, अनुचित बात को सहन न करना ये आपके जन्मजात गुण थे। आपने परमहंस परमभजन जी, महात्मा शेषरामजी, सिद्धपुरुष स्वामी शिवभजन जी, महात्मा तुहीराम जी आदि अनेक संत पुरुषों का समागम किया था। परिणामत: सम्वत् १६६२ में आपने जमात व डेरा का परित्याग कर वस्तुत: साधुवृत्ति में ही रहने का निश्चय कर लिया।

तब से सम्वत् २००६ तक सैंतालीस वर्ष आपके एकान्तत: साधुजीवन में ही व्यतीत हुए । जमात छोड़ने के पश्चात् आपने कुछ समय तक ऋषिकेश में झाड़ी में निवास किया। उस समय ऋषिकेश में कई अच्छे २ महात्मा निवास कर रहे थे । आपने वहाँ रह कर वेदांत शास्त्र का तात्त्विक ज्ञान सम्पादन किया। भाषाग्रन्थों के

उत्तम ज्ञाता, सीकर निवासी पूज्य स्वामी रामकरण जी महाराज से आपने विचारसागर व वृत्तिप्रभाकर का अध्ययन किया। इसके बाद वे दोनों ग्रन्थ, वाणी तथा वैराग्यशतक ही आपके मनन करने के ग्रन्थ थे। इनका आपने खूब मनन किया और इनके सिद्धांत पक्ष को आत्मसात् किया। वैराग्यवृत्ति आपकी स्वाभाविक थी । वेदांत के इन प्रक्रियांशों को समझ लेने पर आपका जीवन एक सच्चे त्यागी साधु के रूप में ढल गया।

आप एक अलफी, एक चादर, एक पात्र तथा दो पुस्तकें इतना ही परिग्रह रखते थे । १६६२ के पश्चात् आप प्राय: भ्रमण ही करते रहते थे। स्थायी रूप से किसी स्थान पर नहीं ठहरते थे । भूख तथा क्लेश से पीड़ित प्राणियों की सेवा व सहायता आपके व्यावहारिक जीवन का ध्येय था। आपने समय समय पर पड़ने वाले दुष्कालों में मनुष्यों तथा पशुओं की सहायता के लिए परम प्रयास किया । कोई भी दीन दुखी, आपके सामने आ जाने पर, कुछ न कुछ सहायता पाये बिना नहीं रहता था। आपने स्वयं विशेष शास्त्रीय विषयों का अध्ययन न करने पर भी शिक्षा की इच्छा रखने वाले छात्रों को सहायता दे शिक्षा के लिए सदा प्रेरित करने का प्रयास किया । आपकी इसी भावना ने उक्त संस्था के लिये इतनी सहायता की पूर्ति करवायी।

आपका पूरा जीवन त्याग व तप का मूर्तिमान स्वरूप था। स्वास्थ्य भी आपका इकहत्तर वर्ष की आयु तक परम उत्तम था। स्वर्गीय परम मान्य स्वामी श्री लक्ष्मीरामजी महाराज के देहावसान के बारह दिन बाद रात्रिको सहसा आपकी कमर में वेदना होकर दोनों पैरों की क्रियाशक्ति में सहसा न्यूनता हो गयी, तब से इस व्याधि ने अन्त तक आपका परित्याग नही किया। तेरह वर्ष का यह अन्तिम समय आपका व्याधिपीड़ित था, फिर भी आप अपनी सभी क्रियाएं सम्यक्तया स्वयं ही सम्पन्न किया करते थे, समय पड़ने पर दो तीन मील साहस कर चल भी लेते थे । व्याधिग्रस्त होते हुए भी व्याधि का कोई प्रभाव आपके मानस क्षेत्र पर नहीं था। आपका सम्पूर्ण जीवन परम सादगी का था। खान-पान भी अत्यन्त सादा भिक्षावृत्ति पर आधारित था। आपकी धारणा अत्यंत दृढ़ थी । जो संकल्प आप कर लेते थे उसकी पूर्ति अनिवार्य थी। दृढ़ता, स्थिरता, सिद्धान्त, निश्चय, साधुता, सचाई, त्याग, वैराग्य तथा चरित्र-शुद्धि आपके विशिष्ट गुण थे। बुद्धि तथा मेधा-शक्ति भी आपकी परम प्रबल थी। अति कठिन विषय को समझते आपको देर नहीं लगती थी ।

अधिक क्या कहा जाय, इस समय आप जैसे शरीर बहुत ही कम दृष्टि में आते हैं। आपके निश्चय के अनुसार बिना किसी प्रकार के रोग कष्ट उठाये संवत् २००६ की ज्येष्ठ शुक्ला १३ को आप कलकत्ता में सत्संगी पुरुषों से बातचीत करते २ ही ब्रह्मलीन हो गए । आपने अपना जो स्थान रिक्त किया अब उसकी पूर्ति अशक्य है। आपका अभाव सहस्त्रों प्राणियों को खटक रहा है। जो एक बार भी आप से मिला हुआ है वह आपके अभाव की अनुभूति किये बिना नहीं रह सकता। आप जैसी पवित्र आत्माओं का आगमन जनकल्याण के लिए ही हुआ करता है। आपने अपने इस कर्तव्य की तथा साधुता के लक्ष्य की सम्यक् पूर्ति की थी।